Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education

Vol. X, Issue No. XX, Oct-2015, ISSN 2230-7540

REVIEW ARTICLE

आधुनिक हिंदी दलित विमर्श व नवजागरण

AN INTERNATIONALLY INDEXED PEER REVIEWED & REFEREED JOURNAL

www.ignited.in

Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education
Vol. X, Issue No. XX, October-2015, ISSN 2230-7540

आधुनिक हिंदी दलित विमर्श व नवजागरण

Mukta

Research Scholar, Maharaj Vinayak Global University, Rajasthan

----------X----------

प्रस्तावनाः–

भारतीय समाज में व्याप्त वर्ण–व्यवस्था, जाति, अस्पृश्यता शोषण, दमन, उत्पीडन के खिलाफ संघर्ष की लंबी प्रक्रिया रही है। प्राचीन समय से लेकर आज तक अन्याय और वर्चस्व के विरूद्ध सामाजिक परिवर्तन के लिए धार्मिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक आंदोलन चलते रहते हैं। समय और काल परिवेश के अपने दबावों के फलस्वरूप यह आंदोलन तीव्रता और ठहराव से गुजरते हुए नया आकार पाता रहा है। सामाजिक परिवर्तनों की प्रक्रिया को अग्रसर करते हुए तथा तमाम आयामों से गुजरते हुए दलित वर्ण–व्यवस्था के बस एक स ाक्त आंदोलन और ग़भीर चिंतन है।

हिंदू व्यवस्था की अमानवीयता का परिणाम इतना भयानक है कि आज भी भारतीय समाज हजारों जातियों में बंटा हुआ है। जातिगत भेदभाव आज भी उसी प्रकार जडें जमाए हुए हैं, जैसा कि हजारों वर्षों पहले था। दलित विमर्श इस जड़ को उखाड़ फेंकने के लिए कृतसंकल्प है। ओमप्रका ा वाल्मीकि के शब्दों में, भारतीय समाज में वर्ण–व्यवस्था के आधार पर जो बंटवारा हुआ, उसकी ही देन है जातिभेद।

अंग्रेजों के भारत पर आधिपत्य ने भारतीयों के प्रमोद और जड़ता को तोड़ दिया। उन्होंने गुलामी की छटपटाहट को अनुभव किया और देश को आजाद कराने के लिए करवट बदली। परिणाम स्वरूप जीवन संघर्ष बढ़ा और साथ ही साथ जातीय जीवन की भी जागृति हुई। भारतवासी संगठित होकर स्वतंत्रता संग्राम में कूद पड़े। तभी से नवजागरण की शुरुआत हुई मानी जाती हे। सही मायने मे 1857 के गदर के बाद ही भारत में नवजागरण की शुरुआत हुई। भारतवासियों में नवजागृति का संचय होने के बावजूद कई परिवर्तन आए। यह परिवर्तन किन्हीं एक क्षेत्र में नहीं बल्कि समाज के हर क्षेत्र में आया, चाहे वह क्षेत्र धार्मिक, राजनैतिक या फिर सामाजिक ही क्यों न हो।

दलित का आशय :

सदियों से जिसे साहित्य और समाज में हा ाि ए पर फेंक दिया गया था। जिसे शुद्ध, हरिजन, अवर्ण, पंचम, अति ाूद्र आदि नामों से विहित करके दया का पात्र बना दिया गया था, वही आज प्रखर आत्मबोध के साथ इन सारी शब्दावलियों को ठुकराकर स्वयं 'दलित' के रूप में अपनी अस्मिता का बोध करा रहा है। प्रख्यात मराठी दलित साहित्यकार शरण कुमार लिंबाले के शब्दों में, 'दलित को 'दया' से घृणा है, उस दया और सहानुभूती नहीं 'अधिकार चाहिए। 'दलित' शब्द और 'दलित साहित्य' अपनी अर्थवक्ता, व्यापकता, सार्थकता तथा अस्मितागत बोध के रूप में आज विद्वज्जनों के मध्य साहित्यिक विमर्श के विषय बने हुए हैं। अतः 'दलित का आशय' व्यापक दृष्टि और बहस की मॉग करता है। दलित शब्द के अन्दर कुचले गए, दबाए गए जनों की जीवन कहानी उतनी ही पुरानी है, जितनी भारतीय हिंदू संस्कृति पुरातन है। चातुर्वण्य व्यवस्था भारतीय संस्कृति की अपनी एक विचित्र वि ोषता है। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वै य और शूद्र इन चारों वर्णों पर आधारित चातुर्वण्य–व्यवस्था ऋग्वैदिक कल से लेकर अद्यतन जातियों की श्रेष्ठता–क्रम में विद्यमान है। इन चारों वर्णों मं शूद्र सबसे नीचे आता है, जिसका कर्तव्य तीनों वर्णों की सेवा करना बताया गया है।

दलित चेतना/दलित आंदोलन :

इक्कीसवीं शताब्दी के आरंभ के पूर्वा पर समय में हिंदी साहित्य में दलित–चेतना/दलित आंदोलन पर एक मजबूत आंदोलन के रूप में उभरा और विकसित हुआ। हिंदी की कुछ पत्रिकाओं ने स्त्री–विमर्श के साथ दलित–चेतना/दलित आंदोलन को प्रमुख स्थान दिया तथा अन्य हिंदी पत्रा–पत्रिकाओं ने भी दलित–चेतना/दलित आंदोलन पर बहस करके इसे और भी व्यापक बनाने का प्रयत्न किया। इक्कीसवीं शताब्दी के आरंभिक वर्षों में दलित लेखकों द्वारा प्रेमचंद के विख्यात महाकाव्यात्मक उपन्यास 'रंगभूमि' को सार्वजनिक रूप से जलाने तथा उन्हें दलित–विरोधी लेखक बताने की घटना ने दलित–विमर्श को साहित्य के केंद्र में लाकर स्थापित कर दिया।

प्रेमचंद को दलित–विरोध के केंद्र में लाने से हिंदी–संसार में बड़ी व्यापक प्रतिक्रिया हुई और प्रेमचंद के पक्ष–विपक्ष दोनों में पत्रा–पत्रिकाओं में लेख छपने लगे तथा दलित लेखकों की आत्मकथाएं, दलित कहानी–संग्रह, प्रेमचंद की दलित–कहानियों के संकलन तथा दलित साहित्य पर महत्त्वपूर्ण आलोचनात्मक पुस्तकों के प्रकाशन का दौर शुरू हुआ।

दलित साहित्य :

भारत की स्वतंत्राता के बाद देश के दलित समाज में क्रांतिकारी परिवर्तन आया– स्वतंत्राता, शिक्षा, आरक्षण, संवैधानिक संरक्षण, जातिगत भेद–भाव पर दंड की व्यवस्था तथा दलित समाज में बुद्धिजीवी वर्ग का उदय, और प्रशासन, राजनीति, शिक्षा आदि में भागीदारी। इसके बावजूद देश में जातिगत भेदभाव की घटनाएं होती रहीं और अस्पृश्यता एवं दमन से देश पूर्णतः मुक्त नहीं हो पाया।

www.ignited.in

आज का दलित–विमर्श एक तरह से दलित लेखकों तक सीमित होता जा रहा है। दलित लेखक ही असली दलित साहित्य की रचना करते हैं, उनका साहित्य स्वानुभूति का है और परानुभूति का साहित्य उनका साहित्य नहीं है, दलित साहित्य की कोई परंपरा नहीं है, दलित साहित्य स्वायत्त है और उसका साहित्य–दर्शन अलग है और साहित्य की मुख्य धारा से उसका कोई संबंध नहीं है। ऐसे ही कुछ विचार और तर्क वर्तमान दलित–विमर्श में सुनाई पड़ते हैं, लेकिन गैर दलितों के सहानुभूतिपूर्ण दलित साहित्य को दलित–विमर्श में स्थान न देने से देश के एक बहुत बड़े हिंदू समाज को काटकर अलग कर देना विमर्श की शक्ति और उसकी व्यापकता को कम करना है। दलित लेखकों को यह समझना चाहिए कि इस नीति से उनका पाठक वर्ग कम होता जाएगा और एक बड़े वर्ग के लेखकों की सहानुभूति के कम होने का भी भय बना रहेगा। दलित लेखकों को यह पूरी स्वतंत्राता है कि वे प्रेमचंद के दलित–चिंतन को चुनौती दें, उसकी आलोचना करें, क्योंकि साहित्य का लोकतंत्रा सबके लिए खुला है, लेकिन उन्हें प्रेमचंद के समय तथा परिस्थितियों को भी ध्यान में रखना चाहिए। गांधी ने 'हरिजन' नाम से अखबार शुरू किया था, लेकिन अब जाति–विशेष के लिए 'हरिजन' शब्द का प्रयोग वर्जित है, लेकिन आज हम गांधी को इसके लिए अपराधी नहीं बना सकते। गांधी के समय में 'हरिजन' शब्द आदरसूचक था, अर्थात् हरि का जन, ईश्वर का जन। आज 'दलित' शब्द पर कोई आपत्ति नहीं है, किंतु यह संभव है कि कल इसे आपत्तिजनक मान लिया जाए। 'दलित' शब्द को स्वामी विवेकानंद, गांधी, प्रेमचंद आदि ने केवल अस्पृश्य जातियों तक सीमित नहीं किया था।

दलित साहित्य की अवधारणा:

आधुनिक हिंदी साहित्य के इतिहास में और वह भी पराधीन भारत में, प्रेमचंद पहले ऐसे कथाकार हैं जिन्होंने दलितों के हजारों वर्षों से चली आई यातना, दमन तथा क्रूर मानवीय भेदभाव एवं अपमान का दंश अनुभव किया और फिर भी अपनी मनुष्यता को मरने नहीं दिया। स्वामी विवेकानंद ने इन शूद्र जातियों की यातना एवं मनुष्यता दोनों का उजागार किया और प्रेमचंद ने भी उनके मार्ग का अनुसरण किया और अपने उपन्यासों एवं कहानियों के द्वारा दलित–विमर्श का एक समानुकूल आधुनिक रूप प्रस्तुत किया। उनके विचारों को हम देख चुके हैं, परंतु उनके साहित्य में भी दलित–चेतना एक प्रमुख प्रवृत्ति के रूप में दिखाई देती है। जहां तक उपन्यासों का संबंध है, उनके 'रंगभूमि' तथा 'गोदान' उपन्यास में कुछ ऐसे पात्रा तथा प्रसंग हैं जो परानुभूति के बावजूद दलित साहित्य के बड़े कथाकार के रूप में हमारे सामने आते हैं। 'रंगभूमि' उनका महाकाव्यात्मक उपन्यास है और उसका नायक सूरदास दलित जाति का है। दलित लेखकों को यह आपत्ति रही कि सूरदास को दलित बनाकर, उसे अंधा दिखाकर प्रेमचंद ने दलित जाति का अपमान लिया है। इन्हीं कुछ कारणों से दलित लेखकों ने 'रंगभूमि' को जलाया तथा पाठ्यक्रम से हटाने का आंदोलन चलाया, लेकिन वे ऐसा कोई प्रबल तर्क नहीं दे पाए जिससे दलित को अंधा नायक बनाने से दलित जाति का अपमान हुआ हो, बल्कि सच यह है कि सूरदास ने दलित जाति का गौरव बढ़ाया।

नवजागरण से संबंधित प्रेमचन्द की कहानियॉ :

प्रेमचन्द एक प्रसिद्ध कहानीकार एवं लेखक थे। उन्होंने अपने लेखन कार्य के माध्यम से भारतीय संस्कृति के विभिन्न पहुलुओं को उजागर किया है और यह इसलिए मुमकिन हो पाया क्योंकि वे भारतीय संस्कृति को बड़ी गहराई से जानते थे। उन्होंने भारतीय संस्कृति की उस सच्चाई को उजागर किया जिसे लोग जानते हुए भी अन्जान बन रहे थे। इस बारे शिवकुमार मिश्र का मत है कि–'' प्रेमचन्द जब कथा के मंच पर आये, भारत की अपनी कथा परम्परा से तो परिचित थे ही, उर्दू और अरबी–फारसी के किस्सों और अफसानों की भी उनको पूरी जानकारी थी। पश्चिम के कथा लेखकों को भी उन्होंने पढ़ा था। बावजूद इसके उनकी रचनाएं कथा लेखन के किसी निश्चित रूप में ढलने के बजाय अभिव्यक्ति के उनके अपने दृष्टिकोण की अनुरूपता में सामने आई, कि कहानी को पारदर्शी होना चाहिए, वह सारगर्भित हो और अपने संवेदनात्मक उद्देश्य को पाठक तक भली भॉति संप्रेषित कर पाने में समर्थ हो।''2 डॉरामविलास शर्मा ने प्रेमचंद के कहानी कहने के ढंग पर विचार करते हुए लिखा है कि ––''कहानी फुरसत की चीज है, काम धाम से छुट्टी पाकर सुनने की चीज है। और जल्दबाजी से काम बिगड़ जाता हैं। प्रेमचन्द कहानी सुनाते है, अक्सर लच्छेदार जबान में, वाक्यों को स्वाभाविक गति से फैलाने की आजादी देकर। अंग्रेजी बाग के माली की तरह उनकी डालियॉ और पत्ते कतर कर नहीं ; फूलों और पत्तियों को हवा में बढ़ने और लहराने की आजादी देकर। जिन्दगी के अनुभवों पर टीका–टिप्पणी भी साथ में चला करती है, व्यंग्य, अनूठी उपमाएं और हास्य बीच–बीच में पाठक को गुदगुदाते रहतें हैं।''

नवजागरण का उद्‌भव और विकास :

नवजागृति शब्द को अंग्रेजी में 'रेनेसा' कहा जाता है। रेनेसा या रिनेसांस' फ्रेन्च शब्द है जिसका अर्थ पुनर्जन्म (Rebirth) होता है। '' रिनेसांस शब्द फ्रांसीसी इतिहासकार मिशले (1798–1874 ई.) ने गढ़ा था और बुर्कहार्ट (1818– 1897 ई.) द्वारा वह ऐतिहासिक अवधारणा में विकसित हुआ।'' 1 प्राचीन ग्रीक, रोमन साहित्य एवं संस्कृति का पुनर्जन्म यानी नवजागृति ऐसा अर्थ माना जाता है। वैसे यह पूर्ण सच नहीं है। '' रिनेसांस' शब्द का अर्थ समय–समय पर परिवर्तन होता है। 16वीं सदी के निकट इसका अर्थ था लैटिन और ग्रीक साहित्य का पुनरुथान। इटली निवासी इस आंदोलन को 'रिनेसिमेन्टो' या क्लासिकी भाषाओं और साहित्य का 'पुनर्जन्म' कहते हैं। यह विद्या या कला का 'पुनर्जन्म' या 'पुनरुत्थान' मध्ययुग और आधुनिक काल को अलग करने के लिए कल्पित किया गया था।'' नवजागृति से मानवता का मूल्य बढ़ा और हर क्षेत्र में विकास तेजी से होने लगा। यानी हम यह कह सकते हैं कि प्राचीन काल में विद्या, कला, साहित्य एवं संस्कार के पुनर्जन्म के आन्दोलन को नवजागृति के नाम से पहचाना जाता हैं।

नवजागरण की उत्पत्ति भारत में :

भारत में शताब्दियों से अनेक परिवर्तन आये। पहले जब भारत में आर्यों का शासन था तब प्रजा धार्मिक, सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक रूप से समृद्ध थी लेकिन मुस्लिमों ने जब भारत पर चढ़ाई की तब भारत में राजनैतिक, धार्मिक, आर्थिक और सामाजिक रूप से अंधकार फैल गया था। राजनैतिक पराधीनता ने भारतवासियों को दुर्बलता, दरिद्रता, हीन–भावना और अन्य विकारों से ग्रस्त कर रखा था। पाश्चात्य संस्कृति तथा सभ्यता के साथ हुआ यह साक्षात्कार भारतीय समाज के लिए एक दुर्भाग्यपूर्ण घटना थी। कुछ सौ साल पहले मुगलों का आगमन हुआ था, पर वह लगभग आत्मसात हो चुका था। वे यहॉ लूटने आये थे,

www.ignited.in

लेकिन वे लुटेरे से धीरे–धीरे शासक बन गये और बाद में यहीं के होकर रह गये।

इसी सन्दर्भ में भवानीलाल भारतीय का मत है कि–'' विदेशी शासन से उत्पन्न भाव ने भारत के विशाल हिन्दू समाज के धार्मिक आध्यात्मिक तथा नैतिक मूल्यों को अपूरणीय क्षति पहुॅचाई थी। सहस्राब्दियों पूर्व के वैदिक औपनिषदिक तथा रामायण एवं महाभारतकालीन समाज में लोगों की इहलोक एवं परलोक के प्रति जो स्वस्थ दृष्टि थी वह तो अतीत की वस्तु हो ही गई थी, मौर्य और गुप्तयुगीन समृद्धि तथा वैभव तत्कालीन लोगों की कलात्मक अभिरुचि, साहित्य, संगीत, काव्य तथा स्थापत्य के क्षेत्र की बढ़ती उपलब्धियॉ भी इतिहास की कहानियॉ बनकर रह गई। उस युग में बृहत्तर भारत का जैसा मानचित्र उभरकर आया और पूर्व के समुद्रपारीय देशों पर भारत की सांस्कृतिक विजय ने जैसी छाप छोड़ी वह सब अतीत की वस्तु बन गई थी। धर्म समाज तथा देश के सामान्य जनजीवन पर पराधीनता की काली घटाओं ने आपत्ति,, विपत्ति, शोषण और अभिशापों की जैसी उपल वृष्टि की, उससे लोगों के दुख और कष्ट बढ़े।''

इस समय लोग आर्थिक रूप से इतने पराधीन हो गये थे कि गरीब और गरीब होने लगे थे और किसान मजदूर बनने लगे थे। गृह उद्योग, कुटीर उद्योग, खेती आदि नष्ट हो गये थे। अंग्रेजों का जुल्म दिन–प्रतिदिन बढ़ने लगा था। राज तो अंग्रेजों ने पहले ही ले लिया था बाद में उन लोगों ने व्यापार में भी अपनी मनमानी चलाई। परिणाम स्वरूप भारतीय जनता गरीब बनती गई और अंग्रेज और धनवान बनते गये। आर्थिक, राजनैतिक रूप से तो हम खत्म हो ही गये थे लेकिन धार्मिक रूप से भी हमारे धर्मगुरुओं ने भारतीय संस्कृति की जड़ को खोखला कर दिया था।

''भारत के लोग यह जानते थे कि उनका पतन क्यों हो सकता है। साक्षरता विवेक की रचना में सहायिका हो सकती है किंतु निरक्षर भी विवेकशील हो सकता है और उसका विवेक अधिक प्रभावपूर्ण और प्रभावशाली हो सकता है, लोग साक्षर भले ही न हों पर सदा से विवेकी रहे हैं और मूल्यों का मर्म समझते हैं। केवल आर्थिक और काम जगत के मूल्य उनके नियामक नहीं रहे हैं अपितु वे इनका संचालन भी धर्म और मुक्ति की दृष्टि से करते हैं। पुरुषार्थ चतुष्टय का योग ही भारत की कर्मभूमि की पीठिका का आधार स्तंभ है। तब तक सिद्धि की परिकल्पना भारत की मनीषा नहीं कर सकती जब तक की इन चारों की यौगिक उत्पत्ति से जीवन का संचालन न हो। फूट, परस्पर द्वेष, घृणा, सत्ता का लोभ, ज्ञान, विज्ञान की कमी भारत के पराभव का कारण बनी थी और उन्होंने ऐसी प्रथाओं को जन्म दिया था जिनके कारण देश पराभूत हुआ था। इनके मर्म के अंतर तक भारत की मनीषा पहुॅच चुकी थी और यह देश अपने इन मूल्यों की स्थापना के लिए व्याकुल था जिनके कारण यह मुक्त और विराट रहा है। सन् 1857 के विप्लव ने उन मूल्यों की पुनर्स्थापना के लिए राष्ट्रीय मंच की नींव रखी।

नवजागरण और विविध साहित्यिक विधाएं :

नवजागरण ' जिसका दूसरा नाम 'पुनर्जागरण' है। इटली, फ्रांस और यूरोप में इसे ' रिनेसांस' कहते हैं। यूरोप में इसकी शुरुआत 13 वीं 14 वीं शताब्दी में हो गई थी। जब हमारे देश में 'लोकजागरण' हुआ था। ' नवजागरण' की शुरुआत 1857 के युद्ध के बाद हुई। वह 19वीं सदी थी। 14 वीं सदी में लोगों ने एक बार भक्ति आंदोलन के माध्यम से जागृति मिल चुकी थी।इसलिए 19 वीं सदी में जब राजनैतिक क्रान्ति के माध्यम से लोगों में जागृतता सुसुप्त हो चुकी थी वह फिर से जाग उठी। इसलिए इसे नवजागरण काल या पुनर्जागरण काल कहा गया। मध्यकाल जो अपने अवरोध, जड़ता और रूढ़िवादिता के कारण स्थिर और एकरस हो चुका था, वह एक विशिष्ट ऐतिहासिक प्रक्रिया, जो 1857 के विप्लव से उत्पन्न हुई नवजागरण की प्रक्रिया है उसने उसे पुनः गत्यात्मक बनाया। इसी के साथ ही आधुनिक काल का प्रारम्भ माना जाता है। डॉनगेन्द्र ने अपने हिन्दी साहित्य के इतिहास में ' आधुनिक' शब्द के दो अर्थ बताए हैं।'' मध्यकाल से भिन्नता और नवीन इहलौकिक दृष्टिकोण'' 63 यानी कि आधुनिक काल में मध्यकाल से भिन्न प्रवृत्तियॉ थीं। यहॉ लोगों में जागृति का संचय हुआ था। दार्शनिक चिन्तकों तथा धार्मिक व्यख्याताओं का आविर्भाव हुआ। इस काल में पाश्चात्य संस्कृति का एक बड़ा उत्साह पूरे भारत में फैल गया। अंग्रेजी शिक्षण का प्रचार होने लगा, इसी समय 'मशीनयुग' का आरम्भ हुआ। अंग्रेजों ने अपनी सहूलियतों के लिए और अपनी उत्पादन क्षमता बढ़ाने के लिए कई नई मशीनों की स्थापना करखानों में की। इसी युग में प्रेस, डाक, टेलीफोन, टेलीग्राफ की शुरुआत हुई। रेलवे, बस, मोटर की शुरुआत हुई इसी समय में राजाराम मोहनराय, स्वामी दयानंद आदि समाज सुधारकों ने भारतीय समाज की कुरीतियों जैसे सतीप्रथा, बालविवाह आदि को दूर करने का बीड़ा उठाया और शिक्षा आदि को आगे बढ़ाने का प्रयत्न किया। हमारा देश इस समय तक पूरा जागृत हो गया था इसलिए वे स्वतंत्रता के क्षेत्र में आगे बढ़ रहा था। पूरे देश को इस स्वतंत्रता के लिए एक जुट करना जरूरी था इसलिए भारतीयों ने अंग्रेजी मशीनों का फायदा उठाया और हर एक क्षेत्र की जन भाषाओं में लोगों के समाचार पत्र द्वारा संदेश भेजने लगे। इसी समय हमारे साहित्यकार अपने साहित्य के माध्यम से लोगो में जागृति लाने की कोशिश करने लगे। इसी जागृति की वजह से हमारे देश को आजादी मिली।

'नवजागृति' के आविभार्व से देश के हरेक क्षेत्र में परिवर्तन आने लगा, जिसकी चर्चा हम ऊपर कर आए है। इस परिवर्तन के साथ समाज के लोगों और उनकी सोच में भी परिवर्तन आया। जिसने मध्यकाल की रूढ़ि चुस्तता को खत्म करके आधुनिकता को जन्म दिया। अर्थात् हम यह कह सकते हैं कि नवजागृति या नवजागरण या पुनर्जागरण ही आधुनिक काल का जन्म दाता है। साहित्य समाज का दर्पण है इसलिए समाज में होने वाले हर परिवर्तन की असर साहित्य में जरूर होती है। पाश्चात्य संस्कृति के मेल, विविध मशीनों की उपलब्धि तथा हमारे देश की सामाजिक, धार्मिक, राजनैतिक एवं आर्थिक परिस्थिति के कारण हिन्दी साहित्य में अनेक विधाओं का जन्म हुआ।

उपसंहार –

प्रेमचंद की हर कहानी भारतीय समाज की किसी न किसी रूढ़िगत परंपरा का खंडन करती दिखाई देती है। मेरे शोधप्रबन्ध का विषय 'नवजागरण काल' पर आधारित है। नवजागरण काल में भी भारतीय समाज की कुरीतियों का खंडन–मंडन उस समय

के समाज–सुधारकों ने किया था और प्रेमचंदजी ने अपनी कहानियों के माध्यम से उन समाज सुधारकों का साथ दे रहे थे। इसीलिए तो प्रेमचंद को 'कलम का सिपाही' कहा जाता है। प्रेमचंदजी गरमदल और नरमदल के मध्यस्थी थे। गरमदल यानी सुभाषचन्द्र बोस की विचारधारा पर चलने वाले लोग और नरमदल यानी कि गांधीजी की विचारधारा पर चलने वाले लोग। इन दोनों के आजादी प्राप्त करने के मार्ग अलग अलग थे। प्रेमचंद ने इन दोनों के बीच का मध्यस्थ रास्ता अपनी लेखनी के माध्यम से निकाला। हिन्दी कथा साहित्य में प्रेमचंदजी ने जो गौरव प्राप्त किया है, उसका महत्व अनिवर्चनीय हे। उनके कथा साहित्य में हमें सर्वप्रथम मानचरित्र की पहचान उपलब्ध होती है। प्रेमचंदजी के कथा साहित्य में मध्यमवर्ग की दयनीय स्थिति का हृदयस्पर्शी यथार्थोन्मुखी चित्रण मिलता है।

ग्रन्थ सूची

1. प्रेमचंद–जीवन और कृतित्व – हंसराज 'रहबर' रामलालपुरी, आत्माराम एण्ड संस, काश्मीरी, दिल्ली–6

2. प्रेमचन्दः उनकी कहानीकला–सत्येन्द्र, साहित्य रत्न भंडार, आगरा

3. प्रेमचन्द– डॉ. जगतनारायण हैकरवाला, प्रकाशक–अक्षरपीठ, प्रकाशन–84, मोहिलनगर, इलाहाबाद–6, प्रथम संस्करण– 1972

4. प्रेमचंदः एक अध्ययन– राजेन्द्र गुरू (जीवन,चिन्तन,कला) मध्यप्रदेशीय प्रकाशन, भोपाल, वर्ष–1958

5. प्रेमचन्द विश्वकोष– कमलकिशोर गोयनका, भाग–1, प्रकाशक– साहित्य निधि, सी–38, ईस्ट कृष्णनगर, दिल्ली–110005, प्रथम संस्करण–1981

6. प्रेमचन्द घर में – श्रीमती शिवरानी देवी, आत्माराम एण्ड संस, दिल्ली

7. नवजागरण और आचार्य रामचन्द शुक्ल–बलीसिंह, शंकर पब्लिकेशन, भजनपुरा, दिल्ली–110053, प्रथम संस्करण–2000

8. भारतीय नवजागरण और भारतेन्दुःनर्मद युग का साहित्य– महावीर सिंह चौहान,अनुस्नातक हिन्दी विभाग, सरदार पटेल विश्वविद्यालय, वल्लभ–विद्यानगर, प्रथम संस्करण–1995

9. नवजागरण के पुरोधा : दयानंद सरस्वती – डॉ. भवानीलाल भारतीय, प्रकाशक–वैदिक पुस्तकालय, परोपकारिणी सभा, दयानन्दाश्रम, केसरगंज, अजमेर, प्रथम संस्करण–1983

10. हिन्दी साहित्य का बृहद इतिहास – भाग–9, संपादक–सुधाकर पाण्डेय, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी, प्रथम संस्करण–1977